THE HINDU

Date: 25-11-26

Beyond generosity

India must listen to Nepal's grievances while lending a helping hand

Editorial

The state visit of Nepal Prime Minister Balendra Shah to Delhi, eight months after he was voted to power as leader of the 'GenZ' movement that ousted the previous government, was anticipated as a chance to reset the turbulent India-Nepal relationship. Bringing Mr. Shah to India for a state visit, his first, was particularly important, given the Modi government's tense ties with his predecessor K.P. Sharma Oli's government; Mr. Oli was not invited to Delhi more than a year into his term and travelled to Beijing instead. Initially, Mr. Shah had also given New Delhi some worrying moments, with comments about boundary disputes, and a refusal to confirm a meeting with Foreign Secretary Vikram Misri, which led to the cancellation of his visit in May. Subsequently, some of the realities of governance, particularly after the massive flash flood in August, have warmed Delhi-Kathmandu relations. Following talks with Prime Minister Narendra Modi, Mr. Shah thanked India for its immediate and unstinting support in the flood relief and rescue operations. Mr. Modi's praise for Mr. Shah indicated the forging of a personal rapport on which to build the road map for ties. India announced a Development Cooperation Package — a generous ₹15,000 crore (about $1.6 billion) — for reconstruction and long-term development in Nepal. Another announcement, to offer Nepal access to Indian ports in Gujarat and Odisha, will go a long way in helping land-locked Nepal, particularly given the bilateral bad blood over the 2015 trade blockade. The inauguration of bridges, roads, trains, energy and fuel lines, an Integrated Check post (ICP) and an agreement to set up an IIT (its third offshore campus) are all signs of concrete plans to improve relations, as outlined in the joint statement titled "Viksit Bharat and Samunnat Nepal: Re-imagining the Partnership".

Despite some of the heated rhetoric over ties, both sides appeared to have decided to deal with areas of differences in a less public manner. Mr. Shah's persistent comments on the boundary dispute, and long-pending request for overflight access for two debt-ridden airports, were not dealt with directly, but in a broad reference about resolving "all outstanding matters" through dialogue. While the joint statement also said they would review all bilateral treaties, New Delhi's contention that the "Eminent Persons Group" (EPG) report that suggested important changes to the 1950 Friendship treaty, is now "not relevant", will ruffle feathers in Kathmandu which has been keen to update the treaty. The government must remember that along with the grand gestures, it is important to keep a close eye on Nepal's grievances as well. If disregarded, these can trip up the broader progress and conception of the bilateral relationship, as spelt out by both leaders.

Date: 25-11-26

Spinning wheels

Karnataka needs a coherent policy on urban mobility

Editorial



While Karnataka has spent years disputing motorcycle owners' right to carry paying passengers, Bengaluru — with the dubious distinction of having one of the world's highest travel times per unit distance — struggles with inadequate public transport capacity and lacklustre intermediate options. The Supreme Court ruling on November 20 to dismiss Karnataka's appeal was thus straightforward, allowing motorcycles to be registered as transport vehicles. The State has often called bike taxis unsafe, yet has not improved the prospects of safer options. Earlier this year, the Centre for Science and Environment estimated the number of buses in urban centres nationwide to be 70% short of the Ministry of Housing and Urban Affairs benchmark and that 400 cities with populations between a lakh and 10 lakh altogether lacked organised bus services. In March, the BMTC reported a fleet of around 7,000 buses in Bengaluru, versus the 13,000 by 2025 envisaged by the Comprehensive Mobility Plan. Expanding the number of Metro stations also creates more demand for travel to and from stations, but the operating costs of the public transport corporation expected to serve that demand are not covered by the resulting increase in rail ridership.

Overall, Karnataka has struggled to set up a consistent transport policy. An expert committee recommended against bike taxis in Bengaluru for first- and last-mile connectivity and in favour of better walking infrastructure and bicycle rentals in 2019, only for the State to launch the electric bike-taxi scheme in 2021, then rescind it in 2024 over safety concerns and drivers' disputes. The market for short booked journeys is also dysfunctional. But while allowing bike taxis could temper autorickshaw fares, the State must investigate drivers' operating costs, the difference between the paid and the received amounts, and prevent large platforms from exploiting the market. Finally, while the Union Road Transport Ministry has reported that 46.2% of all road deaths involved two-wheeler users, two-wheelers' safety relative to autorickshaws and cabs, by the number and distance of journeys, is unclear. The State should require aggregators to report injuries and fatalities and investigate the consequences of drivers' earnings being linked to the number of trips undertaken. The Union government's 2025 Motor Vehicle Aggregator Guidelines already address passenger security, fares, and insurance while allowing States to authorise privately registered motorcycles through aggregators. Karnataka should exercise this additional power. A large national programme is required to address funding for public transport, which is necessary even when it is not immediately profitable.

दैनिक भास्कर

Date: 25-11-26

क्लाइमेट केवल गरीब देशों की ही समस्या नहीं है

संपादकीय

पर्यावरण बैठक सीओपी-31 सन् 2009 के बाद पहली बार बगैर किसी सहमति के खत्म हो गई। यूरोप के देशों ने इस बात पर मसौदा खारिज किया कि इसमें प्रदूषण बढ़ाने वाली जीवाश्म ऊर्जा को कम करने के संकल्प का जिक्र नहीं है। दरअसल भारत और चीन सहित तमाम देशों में कोयला और क्रूड आज भी ऊर्जा के प्रमुख स्रोत हैं। भारत में प्रचुर कोयला भंडार है। अन्य ग्रीन स्रोतों को अंगीकार करने के लिए भारत ही नहीं, सभी विकासशील देशों को भारी धनराशि चाहिए। ये देश संपन्न पश्चिमी देशों से कह रहे हैं कि दो सौ वर्षों से औद्योगिक विकास के क्रम में वे ही प्रदूषण के मुख्य जनक रहे हैं, लिहाजा यह उनका दायित्व है कि वे अब विकास कर रहे देशों की महंगी स्वच्छ ऊर्जा को अंगीकार करने में आर्थिक मदद करें। हालांकि भारत ने अपनी तरफ से स्वच्छ ऊर्जा के क्षेत्र में असाधारण प्रयास करते हुए और और पवन ऊर्जा से बिजली पैदा करने में जबरदस्त प्रगति की है, लेकिन उसे अपनी जरूरत की लगभग आधी बिजली थर्मल पॉवर प्लांट्स से ही मिलती है। ट्रम्प ने दुबारा राष्ट्रपति बनते ही सीओपी से बाहर होने की घोषणा कर दी। अमेरिका ही आर्थिक मदद देने की स्थिति में था। यह बोझ अब यूरोप के देशों पर आ गया है, जो आनाकानी कर रहे हैं। लेकिन प्रति व्यक्ति आय में विकासशील ग्लोबल साउथ से मीलों आगे रहने वाले यूरोप को समझना पड़ेगा कि प्रदूषण से बढ़ता तापमान केवल गरीब देशों को ही नहीं निगलेगा। हाल में यूरोप में पड़ी भयंकर गर्मी आसन्न खतरे का ऐलान है।

Date: 25-11-26

कॉर्पोरेट इंडिया के लिए आगे की डगर क्या?

शेखर गुप्ता, (एडिटर-इन-चीफ, 'द प्रिन्ट')

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने फिक्की की वार्षिक आमसभा में कॉर्पोरेट इंडिया को लेकर चिंताएं जताईं। प्रधानमंत्री गुस्से, हताशा, असहायता तक के भाव में बोल रहे थे। उनका आशय कुछ यह था कि आप लोगों को हरकत में लाने के लिए अब मैं और क्या करूं? यह कुछ-कुछ ऐसा ही था, जैसे कोई फौजी जनरल जोशीली तकरीरें करने

और काफी 'स्पिरिट' बढ़ाने के बावजूद सामने की पहाड़ी पर कब्जा करने में विफल रही अपनी सेना को फटकार लगा रहा हो। कोई सरकार उद्यमशीलता बढ़ाने के लिए क्या कर सकती है? वह बहुत कुछ कर सकती है- नियंत्रणों से मुक्ति, न्यूनतम सरकारी हस्तक्षेप, बाजार की निगरानी, वित्तीय अनुशासन, लाइसेंस से मुक्ति और निवेश पर प्रतिबंधों से मुक्ति। और 'स्पिरिट' बढ़ाने वाले इस पैकेज में टैक्स कटौती बेशक कारगर होती है।

प्रधानमंत्री की निराशा की एक बड़ी वजह यह है कि कॉर्पोरेट इंडिया इन लाभों को अपने कर्मचारियों की वेतन वृद्धि, ज्यादा रोजगार देने या निवेश के रूप में नहीं बांटता। कॉर्पोरेट मुनाफों में वृद्धि के बावजूद ऐसा नहीं हुआ है। यह फौज पहाड़ी पर हमला करने को या तो राजी नहीं है या बहुत डरी हुई है, या टैक्स में छूट को अपनी जेब में डालकर सुरक्षित होने का सुकून महसूस करते रहना चाहती है। प्रधानमंत्री ने जो कहा, उस पर गौर करें।

उन्होंने कहा, 2014 में, बेसिक कॉर्पोरेट टैक्स दर 30 फीसदी थी। हमने उसे घटाकर 22 फीसदी किया। आज भारत में 12 लाख की आमदनी पर कोई इनकम टैक्स नहीं लगता। मैं जानता हूं, आप लोग इस पर ताली नहीं बजाएंगे, क्योंकि आपको जितना भी दिया जाए, आपका पेट नहीं भरता। आपने अपने कर्मचारियों का वेतन बढ़ाया? उनकी संख्या बढ़ाई? नहीं। रवैया यह है कि मोदी जी, आप कीजिए, हम देखेंगे।

अब कॉर्पोरेट इंडिया अपने घाव सहला रहा है तो कांग्रेस ने प्रधानमंत्री के शब्दों को लपक लिया है। जयराम रमेश ने एक्स पर एक पोस्ट में इस गतिरोध के लिए व्यवसाय जगत नहीं सरकार को ही जिम्मेदार बताया। इसके लिए उन्होंने भाई-भतीजावादी पूंजीवाद, नियमन की जकड़, भय के माहौल, जांच एजेंसियों को दी गई खुली छूट को जवाबदेह ठहराया। अमेरिका में राहुल गांधी ने भी कहा कि 'हमने तो कहा ही था'।

यहां मैं अर्थव्यवस्था की हालत पर कुछ कहने की स्थिति में नहीं हूं। हम जानते हैं कॉर्पोरेट इंडिया ने 7 फीसदी से ज्यादा की वृद्धि दर्ज की है, लेकिन वह उसी अनुपात में निवेश, विस्तार नहीं कर रहा है, रोजगार नहीं बढ़ा रहा है। स्टार्ट-अप कंपनियां बढ़ रही हैं लेकिन उद्यमशीलता पर बर्फ पड़ी हुई है। ज्यादातर वृद्धि सरकारी खर्चों, खासकर विशाल इन्फ्रास्ट्रक्चर पर खर्चों के बूते हो रही है। लेकिन अगर कॉर्पोरेट इंडिया जोखिम उठाने से इतना परहेज करता दिख रहा है, तो यह अचानक नहीं हो गया है। यह मूड वर्षों से है। कुछ लोग मांग में कमी की शिकायत करते हैं, तो कुछ का कहना है कि नियमों ने गला घोंट रखा है। अभी भी कई छोटी-छोटी बातों के लिए कई-कई फॉर्म भरने पड़ते हैं, निर्यात जैसी अच्छी बात की इजाजत के लिए भी। क्योंकि रिजर्व बैंक देश में आने वाले एक-एक डॉलर पर नजर रखना चाहता है। और हां, हर अर्जी की तीन कॉपी भरनी होती हैं। सरकार ने नीतियों में छिटपुट रियायतें की होंगी, लेकिन नौकरशाही की जकड़न और मजबूत ही हुई है।

गूगल की मदद लिए बिना फटाफट एक पहेली सुलझाइए। क्या आप खनन मंत्रालय, औषधि मंत्रालय, और इस्पात मंत्रालय के मंत्रियों के नाम बता सकते हैं? मैंने इन तीनों का इसलिए जिक्र किया, क्योंकि प्रधानमंत्री ने खासकर इन क्षेत्रों में कॉर्पोरेट इंडिया की विफलताओं पर जोर दिया : हम खनिज लोहा जैसे कच्चे माल का निर्यात क्यों करते हैं? हमारे पास बॉक्साइट का खजाना है, फिर भी हम तैयार स्टील और विशेष एलुमिनियम एलॉय का आयात

क्यों करते हैं? हम भारी मात्रा में दवाओं का निर्यात करते हैं, इसके बावजूद 'एपीआई' (दवाएं बनाने वाली सामग्री) के लिए चीन पर निर्भर क्यों हैं? लेकिन सत्ता पीएमओ तक सिमट गई है, जिसके ऊपर खुद इतना बोझ है कि वह हर चीज को नहीं देख सकता। इसलिए फैसले नौकरशाही करती है। कॉर्पोरेट इंडिया ने इस स्थिति से समझौता कर लिया है।

वह उस तरीके से काम चला रहा है, जो उसे सबसे अच्छी तरह मालूम है : मुनाफे में से कुछ हिस्सा इस तरह बांटना कि वह कानूनन वैध और साफ-सुथरा हो, लेकिन जो बहुत कुछ कहता हो। खासकर वित्त मंत्रालय से रिटायर होने वाले सचिवों की संख्या देखें, जिन्होंने प्रभावशाली कंपनियों के बोर्डों में जगह बनाई है या निजी क्षेत्र के तमाम बैंकों व शेयर बाजार के हाल में सूचीबद्ध हुए नेशनल स्टॉक एक्सचेंज के अध्यक्ष बने हैं।

सरकार आर्थिक सुधार तो कर रही है लेकिन वह जितने सुधार करने की सोचती है, उससे ज्यादा नौकरशाही के हाथ मजबूत हो जाते हैं। कॉर्पोरेट इंडिया संकेत देकर पहले ही उससे सुलह कर लेता है। यही विरोधाभास है। इसका नतीजा यह है कि ऊपर के स्तर पर जो विकेंद्रीकरण होता है, वह बीच में आकर ठिठक जाता है। सरकार नीतिगत भ्रम से अछूती नहीं है।

1991 के बाद से तमाम वित्त मंत्री यही कहते रहे हैं कि आर्थिक सुधारों का सार संतुलित, अनुमान योग्य टैक्स व्यवस्था है। यह बात आप इस सरकार के बारे में नहीं कह सकते, जो कंपनियों पर जिस दर से टैक्स लगाती है, उससे लगभग दोगुनी दर पर व्यक्तियों पर टैक्स लगाती है। इसकी उल्लेखनीय मिसाल यह है कि उसने 'सॉवरेन गोल्ड बॉन्ड' पर कैपिटल गेन्स टैक्स में छूट में पिछली तारीख से बदलाव कर दिए।

2007 में 'सीआईआई' की आमसभा में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी कॉर्पोरेट लीडरों को इसलिए फटकार लगाई थी कि वे खुद ऊंचे वेतन लेते हैं। विडंबना यह है कि उस समय जो मूड और संदेश था, वह आज के हिसाब से उलटा था। उस समय 'सीआईआई' के प्रमुख सुनील मित्तल ने इसके जवाब में अपने वेतन-बोनस का बड़ा हिस्सा दान में देने का फैसला किया था। उस समय मैंने लिखा था कि कॉर्पोरेट इंडिया को प्रधानमंत्री से कहना चाहिए था कि वे उनका वेतन नहीं तय करते। अगर वे ईमानदारी से टैक्स जमा कर रहे हैं तो उन्हें अकेला छोड़ देना चाहिए। बेशक, ऐसा कुछ नहीं हुआ। कॉर्पोरेट इंडिया ने 'सीएसआर' जैसे प्रतिगामी विचार को भी कबूल कर लिया।

जनसत्ता

Date: 25-11-26

संबंधों में सुधार की उम्मीद और आशंकाएं

पुष्परंजन

नेपाल के प्रधानमंत्री बालेंद्र शाह की पहली भारत यात्रा दोनों देशों के पारंपरिक संबंधों को नई दिशा देने के लिहाज से महत्त्वपूर्ण मानी जा रही है। इस यात्रा का महत्त्व केवल कूटनीतिक औपचारिकताओं तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके पीछे बदलते क्षेत्रीय समीकरण, आर्थिक सहयोग की जरूरतें और भारत के पड़ोस में चीन के बढ़ते प्रभाव जैसी कई रणनीतिक चुनौतियां भी जुड़ी हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और बालेंद्र शाह के बीच हुई बातचीत, समझौते और साझा दृष्टिपत्र से यह संकेत मिलता है कि दोनों देश अपने संबंधों को नए सिरे से मजबूती देने के इच्छुक हैं।

बालेंद्र शाह का प्रधानमंत्री बनना नेपाल की राजनीति में एक बड़े बदलाव के रूप में देखा गया था। युवा नेतृत्व और नई राजनीतिक आकांक्षाओं के बीच सत्ता में आए शाह के सामने नेपाल की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने, रोजगार के अवसर बढ़ाने और बुनियादी ढांचे का विकास करने की बड़ी चुनौती है। ऐसे में भारत की यात्रा उनके लिए आर्थिक और तकनीकी सहयोग हासिल करने का अवसर भी थी। भारत, नेपाल का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार और विकास सहयोगी है। दोनों देशों के बीच खुली सीमा, सांस्कृतिक निकटता और गहरे सामाजिक संबंध इस साझेदारी को विशिष्ट बनाते हैं। हालांकि, भारत को लेकर बालेंद्र शाह की सोच को लेकर सवाल उठते रहे हैं। जून, 2023 में जब वह काठमांडो के मेयर थे, उन्होंने अपने कार्यालय में ग्रेटर नेपाल का नक्शा लगाकर सबको चौंका दिया था।

इस नक्शे में 1816 की सुगौली संधि से पहले नेपाल द्वारा नियंत्रित बताए जाने वाले वे क्षेत्र दिखाए गए थे, जो वर्तमान में भारत का हिस्सा हैं। रिपोर्टों के मुताबिक, इसमें पूर्व में तीस्ता से लेकर पश्चिम में कांगड़ा तक के क्षेत्र शामिल बताए गए थे। उसी वर्ष अगस्त में बालेंद्र शाह ने अपनी चीन यात्रा रद्द कर दी थी, क्योंकि बीजिंग के नए नक्शे में लिपुलेख, कालापानी और लिम्पियाधुरा को भारत के हिस्से के रूप में दिखाया गया था। तब सोशल मीडिया पर उन्होंने सत्ता में काबिज नेपाली नेताओं को इस बात के लिए आड़े हाथों लिया कि वे सीमा विवाद से अपनी नजरें फेर रहे हैं। मगर, प्रधानमंत्री बनने के बाद भारत यात्रा के दौरान उनके एजेंडे में लिपुलेख-लिम्पियाधुरा का कोई मुद्दा नहीं था। दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों की मुलाकात के बाद जारी संयुक्त बयान में सीमा स्तंभों के रखरखाव और मरम्मत से जुड़े कार्यों में प्रगति का उल्लेख किया गया और विदेश सचिवों को सीमा से जुड़े लंबित मुद्दों पर काम करने का निर्देश दिया गया है। इसमें पंचेश्वर परियोजना के अधिकारियों से परियोजना रिपोर्ट को जल्द अंतिम रूप देने के लिए कहा गया है और साथ ही नागरिक उड्डयन पर 'जारी चर्चा' का जिक्र भी किया गया है। संयुक्त बयान में किसी भी विवादित क्षेत्र का नाम नहीं लिया गया है।

नेपाल का मीडिया बालेंद्र शाह के इस दौरे को अलग नजरिए से देख रहा है। 'काठमांडू पोस्ट' ने मंगलवार को प्रकाशित एक लेख में कहा कि 'ईपीजी' रिपोर्ट का कहीं अता-पता नहीं है। संयुक्त बयान उन गैर-शुल्क बाधाओं पर भी पूरी तरह खामोश है, जो नेपाली निर्यात को बाधित करती हैं। उल्लेखनीय है कि नेपाल के पूर्व प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली के कार्यकाल में 1950 की संधि की समीक्षा एवं सुधार के लिए प्रबुद्ध व्यक्ति समूह (ईपीजी) का गठन किया गया था। इस समूह ने ढाई साल तक बैठकों के बाद वर्ष 2018 के मध्य में अपनी रिपोर्ट को अंतिम

रूप दिया था, लेकिन इसे कभी भी औपचारिक रूप से दोनों सरकारों को नहीं सौंपा गया। इस समूह के कुल आठ सदस्यों में से सात जीवित हैं, लेकिन उनमें से कोई यह बताने को तैयार नहीं है कि उनकी अंतिम रिपोर्ट के निष्कर्ष क्या थे। भारत के विदेश सचिव विक्रम मिसरी ने स्पष्ट किया कि दोनों देश भविष्य की ओर देख रहे हैं, इसलिए ईपीजी की पुरानी रिपोर्ट अब मायने नहीं रखती।

बालेंद्र शाह की इस यात्रा के दौरान भारत-नेपाल के बीच भैरहवा हवाई अड्डे के लिए दोतरफा हवाई मार्ग पर भी सहमति बनी है। मगर, विदेशी मामलों के जानकारों का मानना है कि रणनीतिक रूप से यह जोखिम भरा कदम हो सकता है। नेपाल के भैरहवा स्थित गौतम बुद्ध अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे के वास्ते नए हवाई मार्ग चिह्नित करने को लेकर भारत की अपनी रणनीतिक, सुरक्षात्मक और आर्थिक चिंताएं रही हैं। भैरहवा हवाई अड्डे का निर्माण चीन की एक सरकारी कंपनी द्वारा किया गया है और इसके रखरखाव का जिम्मा भी चीन के पास है। यह हवाई अड्डा भारत-नेपाल सीमा (उत्तर प्रदेश के सोनौली से लगती सीमा) से मात्र पांच किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इतनी कम दूरी होने के कारण अंतरराष्ट्रीय विमानों के उतरने और उड़ान भरने के लिए भारतीय हवाई क्षेत्र का उपयोग अनिवार्य हो जाता है, जो संवेदनशील सीमावर्ती इलाकों के ऊपर से गुजरता है। महेंद्रनगर या भैरहवा के रास्ते नए हवाई मार्ग देने पर विमानों का मार्ग भारत के कुछ प्रमुख वायुसेना अड्डों (जैसे गोरखपुर एयरबेस) और संवेदनशील रक्षा क्षेत्रों के करीब से गुजर सकता है, जिसे सुरक्षा के लिहाज से जोखिम भरा माना जाता है।

भैरहवा भगवान बुद्ध की जन्मस्थली लुंबिनी के करीब है। अब तक दक्षिण-पूर्व एशिया (थाईलैंड, श्रीलंका, जापान आदि) से आने वाले अधिकांश बौद्ध पर्यटक भारत के दिल्ली, वाराणसी, गोरखपुर और गया हवाई अड्डों पर उतरते थे और देश के बौद्ध सर्किट (सारनाथ, बोधगया, कुशीनगर) का भ्रमण करते हुए सड़क मार्ग से लुंबिनी जाते थे। भैरहवा में अंतरराष्ट्रीय उड़ानें शुरू होने से पर्यटक सीधे नेपाल पहुंच सकते हैं, जिससे भारत के स्थानीय पर्यटन, होटल और परिवहन व्यवसाय को भी आर्थिक नुकसान होने की संभावना है। उत्तर प्रदेश के गोरखपुर और कुशीनगर अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डों के लिए भैरहवा एक प्रतिस्पर्धी स्थल बन सकता है, जिससे यात्रियों की संख्या प्रभावित हो सकती है। यानी भैरहवा विमानपत्तन के लिए हामी भरना सामरिक और आर्थिक दृष्टि से नुकसानदेह एवं जोखिम भरा हो सकता है। गौरतलब है कि कुशीनगर अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे के अक्तूबर, 2021 में उद्घाटन के बाद से पर्याप्त यात्री नहीं मिलने के कारण यहां से नियमित उड़ानें नहीं हो पा रही हैं। नवंबर, 2023 के बाद से यहां नियमित वाणिज्यिक उड़ानें बंद पड़ी हैं। चिंता इस बात की है कि यदि भैरहवा हवाई अड्डे पर अंतरराष्ट्रीय उड़ानें शुरू हो जाती हैं, तो गोरखपुर हवाई अड्डे का हाल भी कहीं कुशीनगर जैसा न हो जाए।

इसी तरह नेपाल के मीडिया में प्रकाशित एक लेख में कहा गया है कि भारत ने जो आर्थिक सहायता की घोषणा की है, उसमें से केवल 56 अरब रुपए ही आपदा के बाद पुनर्निर्माण के लिए अनुदान के रूप में हैं। दावा किया गया है कि पहले भी भारत की ओर से दी गई सहायता के मामलों में अक्सर ऐसा हुआ है कि नेपाल तक केवल अनुदान वाला हिस्सा ही पहुंच पाया है। मगर, यह सवाल भी कायम है कि भारत कब तक नेपाल को अरबों रुपए

का अनुदान देता रहेगा? नेपाल को दीर्घकालिक नीतियां बनाकर आत्मनिर्भर बनने की दिशा में आगे बढ़ने का प्रयास करना चाहिए।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 25-11-26

जलवायु पर एकजुट नहीं हुई दुनिया

उमेश कुलश्रेष्ठ, (प्रोफेसर, जेएनयू)



जिसकी आशंका थी, वही हुआ। तुर्किये के अंताल्या शहर में 9 नवंबर से शुरु हुआ कॉप-31 सम्मेलन 22 नवंबर को बिना किसी व्यापक सहमति वाले अंतिम समझौते के समाप्त हो गया। बैठक में तेल एवं गैस उत्पादक देशों ने जीवाश्म ईंधन के चरणबद्ध इस्तेमाल को खत्म करने संबंधी स्पष्ट भाषा का विरोध किया, तो वहीं यूरोपीय संघ और प्रशांत द्वीप समूह के कई देशों ने उस मसौदे को अस्वीकार कर दिया, जिसमें 'कार्बन कैप्चर' पर अधिक जोर दिया गया था। विकासशील देशों को आर्थिक सहायता देने के सवाल पर विकसित देशों ने अपनी प्रतिबद्धता नहीं दिखाई। कॉप-31 की यह नाकामी काफी हद तक 2009 के कोपेनहेगन जलवायु सम्मेलन की याद दिलाती है।

कॉप-31 में तुर्किये की 35x35 (पैंतीस गुणा पैंतीस) पहल का खास तौर पर उल्लेख किया गया। इसके तहत 2035 तक वैश्विक अंतिम ऊर्जा खपत में बिजली की हिस्सेदारी मौजूदा लगभग 23 प्रतिशत से बढ़ाकर 35 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है। हालांकि, बिजली उत्पादन यदि मुख्य रूप से कोयले जैसे जीवाश्म ईंधन से ही होता रहा, तो यह पहल निरर्थक साबिक होगी।

अब अगला कॉप सम्मेलन 2027 में इथियोपिया की राजधानी अदीस अबाबा में होगा। गौरतलब है कि भारत ने 2028 में होने वाले कॉप-33 की मेजबानी का प्रस्ताव वापस ले लिया है। यदि भारत इसकी मेजबानी करता, तो उसे स्वच्छ ऊर्जा, विशेषकर सौर ऊर्जा के क्षेत्र में अपनी उपलब्धियों और पेरिस समझौते के तहत किए जा रहे प्रयासों को पेश करने का मौका मिलता।

जाहिर है, जलवायु परिवर्तन के मोर्चे पर दुनिया आज एक ऐसे दोराहे पर खड़ी है, जहां से दो अलग-अलग दिशा में राहें जाती हैं। एक रास्ता परंपरागत ऊर्जा, यानी जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता बनाए रखने का है, जबकि दूसरी राह सौर, पवन और जल जैसी अक्षय ऊर्जा के इस्तेमाल को बढ़ावा देने की है। इलेक्ट्रिक वाहन भी स्वच्छ ऊर्जा की दिशा में बदलाव का एक अहम माध्यम है। दिक्कत यह है कि जीवाश्म ईंधन की जरूरत हमें अमेरिका, रूस और मध्य-पूर्व के देशों पर निर्भर बनाती है, तो स्वच्छ ऊर्जा की ओर बढ़ने के लिए जरूरी खनिज व धातुओं के लिए चीन की दया का पात्र बनना होगा। जाहिर है, अमेरिका परस्त दुनिया आसानी से पाला बदलने की नहीं सोच सकती। इसलिए क्योटो प्रोटोकॉल से लेकर कॉप-31 तक जलवायु सम्मेलनों में फैसलों व उनके क्रियान्वयन को लेकर मतभेद रहे हैं।

साल 2050 तक 'नेट जीरो' का लक्ष्य भी इसीलिए खटाई में पड़ता नजर आ रहा है। हालांकि, भारत और चीन के पास 2070 तक यह लक्ष्य हासिल करने का विकल्प है, पर इसमें चीन की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। दरअसल, चीन इलेक्ट्रिक वाहनों (ईवी) के क्षेत्र में जितनी तेजी से अपनी क्षमता बढ़ा रहा है, उसे देखते हुए यह कहना गलत नहीं होगा कि जल्द ही ईवी क्षेत्र में उसके वाहन पूरी दुनिया में छा जाएंगे।

अभी ईवी बाजार में चीन की हिस्सेदारी 63 से 75 फीसदी है। जाहिर है, आगे उसका वैश्विक कद और बढ़ जाएगा। इसी डर से पश्चिम के देश जलवायु वित्त को अस्वीकार करते रहे हैं, क्योंकि यह विकासशील देशों को स्वच्छ ऊर्जा की ओर ले जाएगा, जिससे चीन को कारोबारी लाभ मिलेगा। यह विशेषकर अमेरिका के लिए खुद अपने हाथ काटने जैसा होगा।

सवाल है, भारत के पास क्या-क्या विकल्प हैं? भारत शुरू से ही जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर अपनी प्रतिबद्धता जताता रहा है। जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए पिछले कुछ वर्षों में हमने उल्लेखनीय प्रयास किए हैं। ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के आकलन और सूची तैयार करने की पहल, 2008 में शुरू की गई राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्ययोजना, जलवायु संबंधी रिपोर्टिंग और अनुकूलन के प्रयास, नेट जीरो उत्सर्जन की प्रतिबद्धता और स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा देने वाली नीतियां महत्वपूर्ण हैं।

हालांकि, अब भी हमारी प्राथमिक ऊर्जा जरूरतों का बड़ा हिस्सा कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे जीवाश्म ईंधनों से पूरा होता है, जिनके लिए हमें बड़े पैमाने पर आयात पर निर्भर रहना पड़ता है। इसका अर्थ है कि परंपरागत ऊर्जा के साथ-साथ स्वच्छ ऊर्जा के कई महत्वपूर्ण उपकरणों और खनिजों के मामले में भी हमें आत्मनिर्भरता बढ़ानी होगी। इसमें इथेनॉल जैसे जैव ईंधन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। ई-20 में मिश्रण का प्रतिशत बढ़ाकर आयातित पेट्रोल की मांग कम की जा सकती है, जिससे विदेशी मुद्रा भी बच सकेगी।

स्वच्छ ईंधन की ओर बढ़ते समय भारत विकास संबंधी अपनी जरूरतों को नहीं नकार सकता। इसलिए कोयले पर निर्भरता कम करने की प्रक्रिया व्यावहारिक और चरणबद्ध होनी चाहिए। उत्सर्जन के चरम स्तर, यानी 'पीक एमिशन' वर्ष की जब तक घोषणा नहीं की जाती, भारत कोयले का उपयोग करे, क्योंकि यह हमारे लिए एक सस्ता

ऊर्जा स्रोत है। ताप विद्युत गृहों को अचानक बंद कर देना भी व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि इससे बिजली आपूर्ति, निवेश और लाखों लोगों की आजीविका प्रभावित हो सकती है। हां, यदि 'पीकिंग ईयर' घोषित होती है, तो उस वर्ष के बाद धीरे-धीरे 2070 तक कोयले से हाथ खींचना चाहिए।

भारत और चीन की विकास संबंधी परिस्थितियां एक जैसी नहीं हैं, इसलिए 'नेट जीरो' की दिशा में दोनों की रणनीति भी अलग-अलग होनी चाहिए। दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा देश होने के नाते भारत को वायु प्रदूषण की निगरानी व नियंत्रण के लिए क्षेत्रीय सहयोग की भी पहल करनी चाहिए। इसके लिए ऐसा साझा मंच बनाया जा सकता है, जहां दक्षिण एशिया के सभी देश वायु प्रदूषण के आंकड़े, वैज्ञानिक अध्ययन और नियंत्रण संबंधी अनुभव साझा कर सकें। चूंकि सीमा पार से आने वाले प्रदूषक भी प्रदूषण के लिए जिम्मेदार हैं, इसलिए हिमालयी क्षेत्र से लेकर बंगाल की खाड़ी और आगे हिंद-प्रशांत क्षेत्र तक वायु प्रदूषण की निगरानी के लिए क्षेत्रीय तंत्र विकसित करना चाहिए।

भारत की भौगोलिक और प्राकृतिक विविधता को देखते हुए जलवायु परिवर्तन का प्रभाव सभी राज्यों पर एक जैसा नहीं पड़ता। इसलिए एक समान केंद्रीय नीति के बजाय राज्यों की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप नीतियां बनानी होंगी- हिमालयी प्रदेशों के लिए अलग नीतियां और तटीय प्रदेशों के लिए अलग।

इसके अलावा, हमें अनुकूलन के क्षेत्र में भी विशेष काम करना चाहिए। जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों के अनुरूप अपनी आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था बनानी जरूरी है। भारत को उन खनिजों और धातुओं के क्षेत्र में भी अनुसंधान बढ़ाने की जरूरत है, जो स्वच्छ ऊर्जा के लिए जरूरी हैं।

Date: 25-11-26

सांस्कृतिक सहयोग की नई खिड़कियां खोलता संवाद

अवधेश कुमार, (वरिष्ठ पत्रकार)

राजधानी दिल्ली में हाल ही में संपन्न तीन दिवसीय 'एससीओ सभ्यता संवाद' एक ऐसी पहल है, जिसे जारी रखा जाए, तो यह पहल संपूर्ण मानव समुदाय और अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था का चरित्र बदल सकती है। दुनिया में ऐसी पहल भारत ही कर सकता था और यही हुआ।

साल 2025 में चीन के तियानजिन में आयोजित एससीओ शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने यह पहल की थी और सभ्यतागत विमर्श व बातचीत के लिए एक खास मंच बनाने का प्रस्ताव दिया था। इसे न केवल स्वीकार किया गया, बल्कि बाद के बिश्केक घोषणापत्र (किर्गिस्तान) में स्वागत किया गया था। इस मंच का

उद्देश्य यही है कि सांस्कृतिक आदान-प्रदान विचारों को समृद्ध कर सकता है और दुनिया में साझा नजरिया विकसित करने में मददगार हो सकता है।

दुर्भाग्य से हमारे देश का राजनीतिक विमर्श इतना बिगड़ चुका है कि इतने दूरगामी प्रभाव वाले आयोजन के महत्व और इसके विभिन्न पहलुओं पर बहस के बजाय पाकिस्तानी पर्यावरण मंत्री मसूद मलिक की इसमें भागीदारी ज्यादा चर्चा में आ गई। जबकि, शंघाई सहयोग संगठन एक वैश्विक मंच है और इसके सभी सदस्य देशों को स्वाभाविक ही निमंत्रण जाना चाहिए। मसूद मलिक के समक्ष भारत की सभ्यता, संस्कृति, अध्यात्म और प्राचीन विरासत को प्रस्तुत किया जा रहा है, तो इसके महत्व को समझा जाना चाहिए। मसूद मलिक ने पुराना किला को हुमायूं और शेरशाह से संबंधित बताते हुए कहा कि यह हमारी विरासत है, तो वहीं प्रधानमंत्री ने प्राचीन काल से लेकर महाभारत के इंद्रप्रस्थ और उसके आगे तक का इसका इतिहास बता दिया था। सच भी यही है और इसके ऐतिहासिक, पुरातात्विक और प्राचीन ग्रंथों के साक्ष्य के साथ लगी प्रदर्शनियों में सब कुछ स्पष्ट था। तो बिना प्रतिवाद किए पाकिस्तान ही नहीं, क्षेत्र और दुनिया के देशों को यह संदेश दिया गया कि भारत ऐसी प्राचीन सभ्यता-संस्कृति वाला देश है, जिसमें जीव-निर्जीव, समर्थक-विरोधी, सबके लिए समभाव और सबके समायोजन का व्यावहारिक रास्ता मौजूद है।

भारत ने स्पष्ट कर दिया था कि सभ्यता विमर्श का उद्देश्य एससीओ देशों के बीच साझा सभ्यतागत विरासत, संरक्षण, शोध, डिजिटल नवाचार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान पर चर्चा करना है। स्वाभाविक ही एससीओ देशों की साझी विरासत के अलग-अलग पहलुओं को समझने की कोशिश हुई। सशक्त संस्कृति के कारण भारत के पास ऐसी अंतःशक्ति और विरासत है, जो ऐसे कार्यक्रमों के आयोजन के लिए इसे दुनिया के किसी भी देश से अधिक उपयुक्त बनाता है। पुराना किला को इस ढंग से सजाया गया था, ताकि वह यथार्थ में भारत की सांस्कृतिक विरासत का असाधारण हिस्सा दिखे।

इसकी प्रस्तुति में भारत और यूरेशिया के सांस्कृतिक जुड़ाव को दिखाने के लिए संगीत, नृत्य, दृश्यात्मक किस्सागोई और उद्धरणों को एक साथ पिरोया गया। 'एसेंस ऑफ आवर एग्जिस्टेन्स', यानी 'हमारे अस्तित्व के मूल तत्व' शीर्षक से लगी प्रदर्शनी में भारत की पुरातात्विक कलाकृतियां और साहित्यिक विरासत के कई ऐसे अंश थे, जिनसे दुनिया और आम लोग अनजान हैं। इसमें ईसा पूर्व 1200 से लेकर 1200 ई तक की दिल्ली में मिली पुरातात्विक सामग्रियां दिखाई गईं।

अंतरराष्ट्रीय संबंधों में 'सॉफ्ट पावर' शब्द का लंबे समय से प्रयोग होता रहा है। यूरोप और बाद में अमेरिका, पूर्व सोवियत संघ और आज के कई शक्तिशाली देश अंतरराष्ट्रीय संबंधों में अपने स्वार्थ के वशीभूत केवल 'हार्ड पावर' का इस्तेमाल करते थे, इसलिए उनको 'सॉफ्ट पावर' का प्रयोग करना पड़ा। अपनी सभ्यतागत विशेषताओं के कारण भारत मूलतः 'सॉफ्ट पावर' है और यही इसकी शक्ति है। अगर हमने कभी अपनी शक्ति का इस्तेमाल किया, तो वह भी सॉफ्ट पावर, जिसमें मनुष्यों के साझा हित, सहकारी जीवन, सभी विचारों, सभ्यताओं व पंथों को सम्मान देने संबंधी भाव की स्थापना ही लक्ष्य था।

गांधीजी ने आजादी का लक्ष्य ही घोषित किया था कि भारत को अपनी सभ्यता-संस्कृति-अध्यात्म की थाती से दुनिया को रास्ता दिखाने का दायित्व मिला है। एससीओ सभ्यता विमर्श आयोजन और मंच को इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए।